44Books.com

दर्द / अंजना वर्मा

(पुस्तक के कुछ अंश)

उस दिन दिव्या आयी तो जब उसके पति समीर कार से सामान उतरवाने में लगे थे, वह पिता से मिलने की बेसब्री में सीढ़ियों से ऊपर जाने लगी। अभी वह ऊपर पहुँची भी न थी कि जहाँ सीढ़ियाँ खत्म होती थीं वहीं मुख्य द्वार के सामने विश्वनाथ सहाय छड़ी लिये मुस्कुराते खड़े दिखाई पड़ गये। वह झुरियों-भरा चेहरा बेटी के आगमन की खुशी से पुता हुआ था। पिता के हँसते चेहरे को देख कर दिव्या को बहुत संतोष हुआ। वह चिंतित रहती थी कि पिता कैसे रहते होंगे? कौन उनका ख्याल रखता होगा? उस दिन उनके चेहरे को देखकर लगा था कि नौकरों के बीच उनका जीवन ठीक से चल रहा है। उनका स्वास्थ्य ठीक है। उस दिन सबके साथ बैठक में चाय पीते हुए वे हँस-हँसकर काफी बातें करते रहे थे। आगे.....

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

उस दिन दिव्या आयी तो जब उसके पति समीर कार से सामान उतरवाने में लगे थे, वह पिता से मिलने की बेसब्री में सीढ़ियों से ऊपर जाने लगी। अभी वह ऊपर पहुँची भी न थी कि जहाँ सीढ़ियाँ खत्म होती थीं वहीं मुख्य द्वार के सामने विश्वनाथ सहाय छड़ी लिये मुस्कुराते खड़े दिखाई पड़ गये। वह झुरियों-भरा चेहरा बेटी के आगमन की खुशी से पुता हुआ था। पिता के हँसते चेहरे को देख कर दिव्या को बहुत संतोष हुआ। वह चिंतित रहती थी कि पिता कैसे रहते होंगे? कौन उनका ख्याल रखता होगा? उस दिन उनके चेहरे को देखकर लगा था कि नौकरों के बीच उनका जीवन ठीक से चल रहा है। उनका स्वास्थ्य ठीक है। उस दिन सबके साथ बैठक में चाय पीते हुए वे हँस-हँसकर काफी बातें करते रहे थे।

दिव्या घर के भीतर गयी तो देखती रह गयी। पिता ने उसके कमरे में बिछावन पर धुली चादर बिछवा दी थी। ताजे फूलों के गुलदस्ते लगे हुए थे। सारी चीजें करीने से लगी हुई थीं। घर-कमरे सब उसी तरह सजे हुए और साफ-सुथरे थे जैसे माँ के जीवित रहने पर रहा करते थे। यह सब देखकर मन का एक कोना खुश हुआ तो दूसरा कोना दुख से भींग गया। इस उम्र में पिता को इसकी चिन्ता करनी पड़ती है, लेकिन जब से दिव्या की माँ गुजर गयी थीं तब से बच्चों के आने पर वे ही इस भूमिका को निभाने लगे थे। कहीं बच्चों को उनके पास आकर कोई तकलीफ न हो जाये। उन्होंने रसोईया को कहकर खाना भी उन सबके पसंद का बनवाया था। लंच पर सबके बीच खाते हुए वे सबसे पूछते रहे थे, "खाना अच्छा बना है न?"

खाते हुए वे बातें भी कर रहे थे। यह उनकी पुरानी आदत थी। आँखों में स्नेह भर कर अपने नवासे प्रफुल्ल से उसकी पढ़ाई के बारे में पूछ रहे थे। दिव्या अपने मायके जाने के लिए मुश्किल से चार दिनों का समय निकाल पायी थी। उसके बेटे प्रफुल्ल की दसवीं की परीक्षा नजदीक थी। परीक्षा की तैयारी का तनाव एक ओर प्रफुल्ल को जकड़े हुए था तो दूसरी ओर दिव्या और उसके पति समीर को। एक-एक दिन महत्त्वपूर्ण था। फिर भी पिता के लिए तो समय निकालना ही होगा। बेटी-दामाद और अपने नवासे प्रफुल्ल से मिलकर वे बहुत खुश हो जायेंगे। पापा की उम्र सत्तर से ऊपर थी। अकेले जीवन बिता रहे पिता के लिए रह-रहकर मन तड़प उठता था। किन्तु अपनी पारिवारिक जिम्मेवारियों को झटककर मन की बात मान लेना औरत के लिए आसान नहीं होता है। फिर भी दिव्या दिन-भर में कई बार पापा का हाल-चाल फोन से पूछती रहती। उनकी तबीयत के बारे में पूछती, सलाह देती और जब मौका मिलता पिता से मिलने आ जाती।

पाँच साल पहले गिर जाने के कारण विश्वनाथ सहाय का एक पैर टूट गया था जो ऑपरेशन के बाद भी पूरी तरह ठीक नहीं पाया था। वे छड़ी लेकर चलने लगे थे। कुछ उम्र और कुछ पैर की कमजोरी के कारण जरूरत से अधिक चलना न उनके लिए आसान था न सुखकर। फिर भी अपनी

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

इच्छा शक्ति के बल पर वे अपनी दिनचर्या पूरी करने के बाद सीढ़ियों से नीचे उतरकर अपनी स्टडी में जाकर बैठते थे। उन्होंने कभी किसी तरह की कमजोरी को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया।

पत्नी के रहने पर सहाय जी अपनी वकालत छोड़ घर-गृहस्थी का कुछ भी जान नहीं पाये। जीवन इतना व्यस्त रहा कि खाने की मेज पर ही परिवार के सदस्यों से बातें हो पातीं या फिर चाय के समय। आज उन्हें घर के हर काम के लिए अपना दिमाग खपाना पड़ता था। नौकरों को समझाते-समझाते वे अक्सर झल्ला उठते थे। पर कोई विकल्प नहीं था। उनकी तीन बेटियाँ थीं जो तीन अलग-अलग शहरों में रह रही थीं। बेटा अंशुमान यू0के0 में रहता था। बेटा-बहू दोनों डॉक्टर थे। वे दोनों साल में एक बार पिता से मिलने भारत जरूर आते थे। माँ के गुजरने पर जब अंशुमान आया था तो उसने पिता को अपने साथ चलने के लिए कहा था। परन्तु वे अपना घर, सम्पत्ति, नौकर-चाकर छोड़कर विदेश में रहने के लिए तैयार नहीं थे। वे यहाँ स्वतंत्र थे। हर कार्य के लिए सेवक नियुक्त था। गाड़ी थी। ड्राइवर था। वह ड्राइवर था भी बफादार जो उनकी तबीयत का हमेशा ध्यान रखता था और उनके हर प्रोग्राम की खबर उसे रहती थी। ऐसी सेवा और स्वतंत्रता यू0के0 में न मिलती। जीवन-साथी के न रहने पर उनके जीवन में भीतर और बाहर जरूर एक सन्नाटा पसर गया था। जीवन-साथी के बिना हमेशा साथ देनेवाला भी कौन होता है? अकेलापन उनके जीवन का एक हिस्सा बन गया था जो अब धरती के किसी कोने में जाकर मिटनेवाला नहीं था। यू0के0 में बेटा-बहू के अस्पताल जाने पर सारे दिन वहाँ अकेले रहना ही पड़ता। दिन-भर कोई चेहरा देखने को भी न मिलता। सेवकों की सेवा से वंचित होते वह अलग।

विधुर पिता को देखने के लिए तीनों बेटियाँ थोड़े-थोड़े समय के लिए बारी-बारी से आती रहती थीं। कुछ दिनों के लिए अकेलापन टूटता, थोड़ी चहल-पहल हो जाती, फिर सब कुछ एकाकीपन में डूब जाता। समय काटने के लिए सहाय जी गीता या रामचरितमानस पढ़ते तो कभी अखबार। दिन कट ही जाता था। नहीं कटने का सवाल इसलिए नहीं उठता था कि शरीर थक जाने के कारण उनके लिए अपनी दिनचर्या ही पर्याप्त लम्बी हो जाती थी। रोज सवेरे से प्रणायाम, पूजा करते-करते काफी समय बीत जाता। फिर नाश्ते और खाने के बाद जो समय बचता वह अध्ययन में लगाते थे।

शाम जरूर लम्बी होकर पसर जाती थी। तब चाय पीते हुए कितना कुछ अनायास ही याद आने लगता था। बीते हुए सुख-भरे दिन, भरा-पूरा चहकता हुआ घर। काम से लौटकर आने पर पत्नी और बच्चों के साथ समय बिताना। अब वह सब एक सपना बन गया था। अब तो हर रात भयंकर हो जाती थी। एक बड़े बेडरूम में पलंग पर अकेले पड़ जाना पड़ता था। बगल के कमरे में एक नौकर जरूर सोता था, लेकिन घोड़े बेचकर। सहाय जी के बच्चे जब आते तो नौकरों को ताकीद कर जाते थे, "देखो, रात को जब पापा बाथरूम जायें तो तुम उठ जाना। पापा बाथरूम में गिरने न

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

पायें।" वे "हाँ-हाँ" कह देते। लेकिन उनके जाने पर भगवान भरोसे ही सब कुछ चलता रहता। रात को जब सहाय जी को उठना पड़ता था तो तीन-चार बार की कोशिशों के बाद ही खड़े हो पाते थे। फिर छड़ी लेते और बाथरूम जाते। बड़ा-सा घर, बड़े-बड़े कमरे। सब ओर सन्नाटा। ड्राइवर नीचे रहता था। ऊपर कुछ हो भी जाये तो नीचे आहट तक न मिले। एक-एक कदम प्रयास कर उठाते। कब पैर कहाँ फिसल जाये कोई ठीक नहीं। यह क्रम हर रात दो-तीन बार दुहराया जाता। सारी परिस्थितियाँ जैसे नट की तरह डोरी पर चलती रहतीं। सूरज उगने पर परिस्थिति की अटकी हुई साँस फिर से चलने लगती। विधुर सहाय जी का यही जीवन हो चला था। इसी तरह एकाकी जीते हुए वे कई बार गिरे भी थे। फिर किसी तरह उठ गये थे। किसी बेटी को फोन करके बताने की जरूरत न समझी थी-न ही सवेरे उठकर ड्राइवर या किसी नौकर को कुछ बताया था। नौकरों को भी उनके गिर-पड़ जाने से उतना फर्क नहीं पड़ने वाला था। उनकी बहुत सारी घटनाओं से वे वाकिफ भी नहीं हो पाते थे।

θθθ

सुबह का समय था। प्रफुल्ल पलंग पर बैठकर पढ़ रहा था। सामने सहाय जी पूजा कर रहे थे। पूजास्थल के सामने की खिड़की खुली हुई थी जिससे सवेरे की गुनगुनी धूप आ रही थी। अहाते में लगे पेड़ों की हरी पत्तियाँ दिखायी दे रही थीं। पूजा करते समय उन्होंने जल वहीं फर्श पर गिरा दिया। तभी प्रफुल्ल की दृष्टि सामने गई। उसने देखा कि नाना का पैर उसी पानी पर फिसलता जा रहा था और वे खिड़की का ग्रिल पकड़े हुए अपना संतुलन बनाये रखने की नाकाम कोशिश कर रहे थे-निःशब्द। एक बूढ़ा, कमजोर शरीर गिरने से अपने को बचाने के प्रयास में लगा हुआ था। लंबा किशोर प्रफुल्ल कूदकर उठा और उसने नाना को पीछे से बाँहों में बाँध लिया। सहाय जी अपनी दुर्बलता छिपाने के लिए मुस्कुरा दिये थे। एक दुर्घटना होते-होते बच गई थी। इस समय प्रफुल्ल का वहाँ होना एक इत्तफाक ही था। ऐसी परिस्थितियाँ तब भी आयी होगीं जब उनके आस-पास बचाने वाला कोई नहीं होगा। भाड़े के टट्टू तब लूडो खेलने में व्यस्त होंगे या अपने लिए विशेष रूप से रखी गयी टी0 वी0 देखने में।

दिव्या को समीर और प्रफुल्ल के साथ रहते हुए दो दिन बीत गये। आज तीसरा दिन था। कल छोड़ परसों उसे वापस जाना था। विश्वनाथ सहाय को यह मालूम हो गया था कि दिव्या परसों जाने वाली है। आज सवेरे से ही अचानक विश्वनाथ सहाय के पैर के अँगूठे में असह्य दर्द होने लगा था। चलना तो असंभव हो रहा था। शरीर के कई हिस्से भी दुख रहे थे। दिव्या ने तुरंत डॉक्टर को फोन मिलाया। लेकिन बात न हो सकी क्योंकि डॉक्टर बाहर गया हुआ था।

सहाय जी अपनी आरामकुर्सी पर उदास बैठे हुए थे-अगल-बगल के माहौल से कटे हुए -से। दो दिनों पहले दिव्या के आने पर खुशी की जो रोशनी उनके चेहरे पर दिखायी दे रही थी, वह अचानक बुझ

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

गयी थी। वे इस तरह बैठे हुए थे जैसे वर्षों से उसी मुद्रा में बैठे-बैठे पत्थर बनकर जम गये हांे। ऐसी स्थिति में पिता को छोड़कर जाना दिव्या के लिए सम्भव नहीं हो पायेगा। उनका सूखा हुआ चेहरा देखकर जब वह अपने जाने के बारे में सोचती तो उसे ऐसी ममता होती जैसे किसी अनजानी जगह में अनजाने लोगों के बीच अपने बच्चे को असहाय छोड़कर जाने का निर्णय ले रही हो।

उसने बेबस होकर पूछा "पापा, बहुत दर्द है क्या?"

सहाय जी ने उत्तर दिया, "हाँ। दर्द तो है ही। बर्दाश्त कर रहा हूँ।"

यह कहने के बाद वे चुप हो गये और सामने शून्य में देखने लगे थे। उनकी आँखों के ऊपर लगा मोटे लेंस का चश्मा उनके चेहरे को अचानक बहुत गमगीन बनाये दे रहा था। उनके भीतर क्या चल रहा था समझना कठिन था। लेकिन दिव्या इतना तो जानती ही थी कि पापा यूँ ही कुछ कहने वाले व्यक्ति नहीं थे। थोड़ा दर्द रहता तो वे बर्दाश्त कर लेते। अचानक इतना दर्द कैसे शुरू हो गया। फिर भी ऊपर से वे शांत दिख रहे हैं। अपनी नासाज़ तबीयत के बारे में जल्दी किसी को कुछ बताने का स्वभाव नहीं था उनका। जिस समय वे गिरे थे और उनका पैर टूट गया था, उस समय भी वे बेटे को खबर करने के पक्ष में नहीं थे। वे कहते रहे थे, "नहीं, अंशुमान को फोन मत करो। मैं ठीक हो जाऊँगा।"

पर दिव्या नहीं मानी थी। उस समय उसने जबरदस्ती फोन कर दिया था और दो दिनों के भीतर ही अंशुमान आ गया था। ऐसा व्यक्ति जिसने सदैव अपने बच्चों का मार्ग प्रशस्त किया। हमेशा उनके पथ के किनारे खड़े होकर हाथ लहरा-लहरा कर उन्हें आगे बढ़ते जाने के लिए कहा, वह कैसे अपने दर्द का इज़हार कर सकता है? जरूर पापा को तकलीफ है। वे बोल नहीं रहे हैं।

उसने बड़ी बहन भारती को फोन मिलाया। भारती भी अपनी दुर्गा पूजा की छुट्टी पिता के यहाँ बिताना चाहती थी। उसे आना तो था लेकिन दिव्या के जाने के कुछ दिनों बाद आती। वह नौकरी करती थी। इसलिए इस छुट्टी में घर के मरम्मत का कुछ काम निपटा लेना चाहती थी। लेकिन दिव्या से उसे ज्योंही मालूम हुआ कि पापा के अंगूठे में दर्द है उसने अपना सारा काम आगे के लिए टालकर दूसरे दिन ही जाने का निर्णय ले लिया। उसने पापा को फोन मिलाया, "हलो पापा?"

"कौन? आरती बोल रही हो?" सहाय जी ने पूछा।

आरती उनकी मँझली बेटी थी जो दूर रहने के कारण साल में दो बार ही पिता से मिलने आ पाती थी-गर्मी की छुट्टी में और एक्समस की छुट्टी में।

भारती ने कहा, "नहीं पापा, मैं भारती बोल रही हूँ। पापा, मैं कल आ रही हूँ।"

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

सहाय जी ने कहा, "ओह भारती? क्यों आ रही हो जल्दीबाजी में? तुम तो कुछ दिनों के बाद आने वाली थी न? तुम्हारे घर के मरम्मत का काम चल रहा है न?"

भारती ने कहा, "नहीं पापा। आजकल कोई काम नहीं चल रहा है। मैं आ रही हूँ।"

अचानक सहाय जी हँस पड़े। फोन पर उनका स्वर बदल गया। उसमें एक खनक आ गयी।

उन्होंने कहा, "अच्छा-अच्छा। बहुत अच्छा, आओ।"

♦♦ • ♦♦

दूसरे दिन भारती ने जल्दी-जल्दी कुछ कपड़े बैग में डाले। तीन घंटे का सफर था। निकलने में कुछ देर हो गई थी। बड़ी मुश्किल से उसने छूटती हुई ट्रेन पकड़ी। हड़बड़ाती हुई सीट पर बैठ गयी और रास्ते-भर खिड़की से बाहर देखती रही। दिमाग में उथल-पुथल मची हुई थी कि ऐसे कैसे पापा का जीवन चलेगा? बिल्कुल एकाकी? उसने भी कई बार कहा था कि पिता उसके साथ आकर रहें। वह अपना बेडरूम अटैच्ड बाथरूम के साथ उनको दे देगी और उनके लिए एक अलग नौकर भी रख देगी जो चौबीसों घंटे उनका ध्यान रखेगा। लेकिन वे तैयार नहीं हुए थे। यह तो अच्छा था कि वह नजदीक रहती थी। सूचना मिलते ही उसके लिए पिता के पास पहँच जाना मुश्किल नहीं था।

स्टेशन आ गया। वह प्लेटफार्म से बाहर आयी तो नीली कार दूर से ही दिखायी पड़ी। ड्राइवर ने आगे बढ़कर भारती के हाथ से बैग ले लिया। घर पहुँचते ही भारती बिना किसी को आवाज़ दिये चुपचाप सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। दोनों बेडरूम खाली थे। डायनिंग हॉल में पहुँची तो देखा सब लोग खाना खा रहे थ्ेा। उसे पापा को देखकर थोड़ा आश्चर्य हुआ। क्योंकि वे सामान्य दिख रहे थे। भारती ने पैर छूकर प्रणाम किया। दिव्या उठ कर गले मिली। प्रफुल्ल का हाथ जूठा था। अतः उसने बायें हाथ से भारती के पैर छूए। समीर भी खाना खा रहे थे। सिर झुकाकर आँखों से अभिवादन का संकेत करते हुए मुस्कुराकर बोले, "दीदी देखिये, आप के आने से पहले ही पापा का दर्द खत्म हो गया है।"

आँखों में आँसू भरकर भारती ने दिव्या की ओर देखा तो दिव्या बोली, "हाँ आज सवेरे से ही पता नहीं कैसे पापा के अँगूठे का दर्द बहुत कम हो गया है अचानक।"

भारती ने पापा से पूछा, "क्या पापा? आप ठीक हैं? आपको चलने में कोई तकलीफ तो नहीं?"

"नहीं, आज तो ठीक है अँगूठा। पता नहीं कैसे?" सहाय जी ने कहा। शायद उन्हें भी अपने पर ताज्जुब हो रहा था। भारती ने देखा-पिता के खाने का वही पुराना परिचित ढंग। बचपन में वह उनके चेहरे को देखा करती थी जब वे खाना खाने के समय अक्सर उसे भी बुलाकर अपने हाथ से

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com

खिलाने लगते थे। दिव्या ने भारती को बताया कि कल अंशुमान का फोन आया था। उस समय पापा दर्द के मारे कुछ बोल नहीं पा रहे थे। पर हाथ में फोन का रिसीवर आते ही उनके चेहरे पर अनायास मुस्कुराहट आ गयी। उन्होंने अंशुमान को गलत कह दिया कि वे बिल्कुल ठीक हैं। दर्द के बारे में कुछ बताया ही नहीं। भारती को यह सुनकर ताज्जुब नहीं हुआ, क्योंकि वह समझ गयी कि पापा ने ऐसा इसलिए कहा होगा कि कहीं अंशुमान चिंतित न हो जाए। लेकिन वे फिर ठीक भी तो हो गये बिना कोई दवा लिये? वह पिता की तबीयत के बारे में सुनकर ही घबराकर भागी चली आयी थी। पूरे कपड़े भी नहीं रखे थे। लेकिन यह क्या? पापा ठीक हो गये रात-भर में ही? क्या उसके आने की खबर सुनकर? हाँ, शायद ऐसा ही हुआ था। दिव्या जा रही है पर भारती आ रही है। विश्वनाथ सहाय ने चारों ओर फैले सन्नाटे को अभी पराजित कर दिया था। बच्चों के साहचर्य-सुख की बारिश में भींग कर वे खिल जाते थे बेले की तरह। उनका पूरा व्यक्तित्व इस तरह ताज़गी से भर उठता था जैसे कोई सींचा गया गमले का पौधा हो या ठंडी हवा में झूमता पेड़। भारती देख रही थी कि अभी सबके साथ खाना खाते हुए वे कितने खुश दिखायी दे रहे थे।

सहायजी ने भारती से कहा, "बैठो भारती। क्या सोच रही हो? खाना खाओ। रास्ते में कोई तकलीफ तो नहीं हुई?"

भारती ने कुर्सी खींचते हुए कहा, "नहीं पापा। आपको अच्छा देखकर बहुत खुशी हो रही है।"

यह सुनकर पापा हँसने लगे थे। वे कभी खूब खुलकर तो नहीं हँसत थे। अभी हँसे थे। एक संक्षिप्त-सी हँसी। पर भारती समय गयी थी, बचपन से देखती आयी थी कि पापा की छोटी-सी हँसी में भी बहुत सुख छुपा रहता था। अभी वे खूब खुश थे भीतर से। वह सोचने लगी कि दिव्या अपने पति समीर और बेटे प्रफुल्ल के साथ लौट जायेगी। पापा को नहीं खलेगा, क्योंकि उनके पास वह रहेगी। लेकिन कुछ दिनों बाद वह भी तो जायेगी, तब? तब फिर?

44Books.com

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट - JobSarkari.com